विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P2: मध्यकालीन कविता - 1**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M32: बिहारी की सौन्दर्य चेतना**
इकाई टैग	**HND_P2_M32**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** अधिष्ठाता, साहित्य विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : kks5260@gmail.com
इकाई लेखक	**डॉ. जैनेन्द्र कुमार पाण्डेय** सहायक प्रोफेसर श्री मुरली मनोहर टाउन डिग्री कॉलेज, बलिया (उ.प्र.) ईमेल : jainendratdc@gmail.com
इकाई समीक्षक	**प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित** प्रोफेसर (सेवानिवृत्त), हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र) ईमेल : suryadixit123@gmail.com
भाषा संपादक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. रीतिकाल की कवि परम्परा
4. रीतिकालीन परिवेश और बिहारी
5. बिहारी की सौन्दर्य-चेतना का स्वरूप
6. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप -

- रीतिकाल के प्रमुख कवि के रूप में बिहारी का परिचय प्राप्त कर सकेंगें।
- रीतिसिद्ध काव्य और उसके प्रतिनिधि कवि के रूप में बिहारी का महत्व समझ सकेंगे।
- बिहारी की सौन्दर्य- चेतना का विश्लेषण कर सकेंगे।
- रीतिकालीन परिवेश का बिहारी के चिंतन और उनकी सौन्दर्य चेतना पर प्रभाव को जान सकेंगे और
- बिहारी के काव्य-सौन्दर्य के स्वरूप को समझ सकेंगे।

2. प्रस्तावना

बिहारी रीतिकाल के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कवियों में से एक हैं। हिंदी के अधिकतर आलोचक उन्हें इस काल का सर्वश्रेष्ठ कवि मानते हैं। कुछ आलोचक इस बात से सहमत नहीं हैं, परन्तु उनकी दृष्टि में भी बिहारी रीतिकाल के महत्वपूर्ण कवि हैं। बिहारी की प्रसिद्धि का आधार उनकी एकमात्र रचना- 'बिहारी सतसई' है। इसकी लोकप्रियता का अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि हिंदी में 'रामचरित मानस' के बाद सबसे अधिक टीकाएँ इसी ग्रन्थ की लिखी गयी हैं। सिर्फ एक रचना और वह भी मुक्तक- काव्य लिखकर हिंदी में जो सम्मान बिहारी को प्राप्त हुआ, वह किसी और कवि को नहीं। भगीरथ मिश्र के शब्दों में : "बिहारीलाल रीतिकाव्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनकी यह ख्याति उनके अनन्यतम ग्रन्थ 'सतसई' पर आधारित है।" (हिंदी रीति साहित्य, पृष्ठ 139)

3. रीतिकाल की कवि परम्परा

रीतिकाल में कवियों को तीन श्रेणियां दिखाई देती हैं। पहली श्रेणी रीतिबद्ध कवियों की है। इसके अंतर्गत वे कवि शामिल हैं, जिन्होंने काव्य के विभिन्न अंगों का लक्षण- निरूपण किया है और उदाहरणस्वरूप स्वरचित रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। ये रचनाकार मूलतः कवि हैं, किन्तु कविकर्म की शिक्षा देने के उद्देश्य से उन्हें आचार्य की भूमिका भी निभानी पड़ी है। दूसरी श्रेणी रीतिसिद्ध कवियों की है। इसमें वे कवि शामिल हैं जिन्होंने काव्यांगों का लक्षण- निरूपण नहीं किया है, किन्तु जिनकी कविता काव्यशास्त्रीय नियमों से बंधी हुई है। तीसरी श्रेणी रीतिमुक्त कवियों की है। इसमें वे कवि शामिल हैं जिन्होंने न तो काव्यांगों का विवेचन किया है और न ही काव्यशास्त्रीय नियमों में बंधकर काव्य- रचना की है। इनकी कविता काव्यशास्त्र की जकड़बंदी से मुक्त है। इस दृष्टि से बिहारी रीतिसिद्ध कवि हैं। उन्होंने कोई लक्षण- ग्रन्थ नहीं लिखा है, किन्तु उनकी रचना- प्रक्रिया पर काव्यशास्त्रीय नियमों का प्रभाव लक्षित किया जा सकता है। उनकी कविता में अलंकार, ध्वनि, रस, नायिकाभेद, नखशिख की जो योजना हुई है, उस पर काव्यशास्त्रीय परिपाटी का गहरा असर है। वैसे तो रीतिसिद्ध काव्य के अंतर्गत अनेक कवियों की चर्चा होती है, परन्तु इस काव्यधारा के प्रतिनिधि निर्विवाद रूप से बिहारी ही हैं।

4. रीतिकालीन परिवेश और बिहारी

अधिकांश रीतिकालीन कवियों को राज्याश्रय प्राप्त था। बिहारी मिर्जा राजा जय सिंह के दरबार में रहते थे। इस सन्दर्भ में एक कहानी प्रचलित है। कहा जाता है कि राजा जय सिंह अपनी नयी- नवेली रानी के प्रेम में इस कदर डूबे थे कि उन्हें राज- काज का ध्यान ही नहीं रहा। इसी समय बिहारी उनके दरबार में पहुँचे। राजा की मुग्धासक्त दशा को लक्ष्य करके उन्होंने निम्नलिखित दोहा लिखा और उनके पास भिजवाया :

"नहिं परागु नहिं मधुर मधु, नहिं विकासु इहिं कालु।
अली, कली ही सौं बंध्यौ, आगे कौन हवाल।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ 25)

कहा जाता है कि इस दोहे का राजा पर गहरा असर हुआ। वे बिहारी की प्रतिभा के कायल हो गए। उन्होंने बिहारी को ससम्मान अपने दरबार में जगह दी।

रीतिकाल सामंती मूल्यों के सुदृढ़ होने का काल है। भोग- विलास और अलंकरण के प्रति राजाओं अथवा सामंतों का विशेष आग्रह होता है। आश्रय- प्राप्त कवियों के लिए स्वाभाविक है कि वे आश्रयदाताओं के आग्रहों और रुचियों को ध्यान में रखें और उसी के अनुकूल रचना करें। इस दृष्टि से स्वीकार करना होगा कि इस काल के कवियों की काव्य- चेतना या सौन्दर्य- चेतना बहुत हद तक तत्कालीन सामंती परिवेश से प्रभावित है। इस काल के अधिकांश कवियों का वर्ण्य- विषय श्रृंगार है, जो तत्कालीन सामंती मनोवृत्ति के अनुकूल ठहरता है। क्या यह सही नहीं है कि स्त्रियों के प्रति भोगवादी दृष्टि के कारण ही राजाओं और सामंतों की श्रृंगार में विशेष रुचि रही है?

5. बिहारी की सौन्दर्य- चेतना का स्वरूप

बिहारी की सौन्दर्य- चेतना के निर्माण में तत्कालीन परिवेश की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस परिवेश का उद्घाटन करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा है : "जिस वातावरण में बिहारी का समय व्यतीत हो रहा था वह विलासिता से ओत-प्रोत था। सामंतों से नारी के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण की आशा ही क्या की जा सकती थी। मुगलों की छाया में ये विलासी सामंत निर्भय विलास का सुख लूट रहे थे। उनके लिए 'तिय छवि', 'छाया ग्राहिनी' से कम न थी।" (बिहारी का नया मूल्यांकन, पृष्ठ 116) इस परिवेश का ही प्रभाव है कि बिहारी ने नायिकाओं के बाह्य सौन्दर्य पर जितना बल दिया है, उतना आतंरिक सौन्दर्य पर नहीं। कवि नायिकाओं के रूप सौन्दर्य, उनकी भंगिमाओं और चेष्टाओं के मोहक वर्णन में ही उलझकर रह गया है। दूसरी बात यह है कि बिहारी की नायिकाओं के सहज चित्र नहीं के बराबर मिलते हैं। उनकी नायिकाएँ वस्त्रों और आभूषणों से पूरी तरह सुसज्जित हैं और अपने रूप -सौदर्य से रसिकों को आकर्षित करने में सफल भी। बिहारी के यहाँ ऐसी नायिकाओं के अनगिनत चित्र मिलते हैं। उदाहरण के लिए यह चित्र देख सकते हैं:

"सहज सेत पंचतोरिया पहिरत अति छबि होत।
जलचादर के दीप लौं जगमगाति तन- जोति।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 159)

पंचतोरिया एक प्रकार का महीन कपड़ा है। इस कपड़े से बनी साड़ी मात्र पांच तोले की होती है। इस साड़ी के पहनने से नायिका की शोभा में चार चाँद लग जाता है। 'जलचादर के दीप' का आशय जो रत्नाकर ने समझाया है वह इस प्रकार है: "जलचादर- धनिकों के किसी उद्यान में किसी ऊँचे स्थान से जल का झीना तथा विस्तृत प्रवाह गिराया जाता है। यह जलचादर कहलाता है। किसी किसी जलचादर के पीछे गवाक्ष बनाकर उनमें दीपकों की पंक्ति लगा दी जाती है। रात्रि के समय जलचादर के पीछे वह जगमगाती हुई दीपावली बड़ी शोभा देती है। इसी दीपावली को बिहारी ने 'जलचादर के दीप' कहा है।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 159)

उपर्युक्त दोहे में नायिका का विलक्षण रूप- सौन्दर्य उपस्थित किया गया है। श्वेत पंचतोरिया साड़ी के भीतर से झाँकता नायिका का शरीर उसी प्रकार भासित हो रहा है जिस प्रकार जलचादर के पीछे जगमगाती दीपशिखाएँ।
संस्कृत कवि माघ की तरह बिहारी भी सौन्दर्य की छटा क्षण- प्रतिक्षण होने वाली नवीनता में देखते हैं। अंकुरित यौवना नायिका का सौन्दर्य -वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है :

"लिखन बैठि जाकी सबी गहि गहि गरब गरूर।
भये न चेते जगत के चतुर चितेरे कूर।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 163)

उपर्युक्त दोहे में नायिका की सखी उसके प्रतिपल बढ़ते यौवन और रूप- कान्ति का वर्णन करते हुए कहती है कि बड़े से बड़े चतुर चितेरे भी इस समय उसका यथार्थ चित्र नहीं बना सकते। इसका कारण यह है कि नायिका की शोभा प्रतिक्षण बढ़ती जाती है और जब कोई चितेरा उसका चित्र बनाकर उससे मिलता है तो इतने में ही उसके शरीर में परिवर्तन हो जाता है। इस प्रकार चितेरे द्वारा बनाया गया चित्र नायिका से मेल नहीं खाता और वह मूढ़ बन जाता है।

बिहारी की सौन्दर्य-चेतना का यही अभिजात रूप हमें उनके श्रृंगार- वर्णन में भी दिखाई देता है। जैसा कि हम जानते हैं, श्रृंगार रीतिकालीन साहित्य का केन्द्रीय विषय है। इसी बात को ध्यान में रखकर आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने रीतिकाल को 'श्रृंगारकाल' नाम दिया था। बिहारी मूलतः श्रृंगारी कवि हैं, हालाँकि उनकी कुछ भक्ति और नीतिपरक कविताएँ भी हैं। श्रृंगार के यद्यपि दोनों पक्षों को लेकर बिहारी ने दोहे लिखे हैं, किन्तु निस्संदेह संयोग श्रृंगार में जितनी उनकी दिलचस्पी रही है, उतनी वियोग में नहीं। इसके कारणों की चर्चा करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा है : "संयोग- श्रृंगार का मूलाधार शारीरिक आकर्षण है 'जो अनेक प्रकार के रूपों, भंगिमाओं, चेष्टाओं, वाचिक एवं शारीरिक विकारों, मानसिक दशाओं आदि में प्रस्तुत होता है।" स्वाभाविक है कि बिहारी के लिए संयोग श्रृंगार वर्णन के अनुकूल है। (बिहारी का नया मूल्यांकन, पृष्ठ, 38)

बिहारी को हाव-योजना या भंगिमा-वर्णन में अप्रतिम सफलता मिली है। नायक- नायिका के बीच होने वाली चुहलबाजी और संकेत- व्यापार के उन्होंने बड़े बारीक चित्र प्रस्तुत किये हैं। आँखों की चेष्टा से ही हृदय के सभी भावों को व्यक्त कर देने वाला यह दोहा देखने लायक है:

"कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन मैं करत हैं नैननु हीं सब बात।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 22)

लोगों से भरे भवन में आँखों के इशारे ही से नायक- नायिका अपने मन की बात कह लेते हैं। स्वीकार करना होगा कि ऐसी भाव- योजना हिंदी जगत में बिहारी के अलावा कहीं और नहीं दिखायी देती।
नायक- नायिका के बीच होने वाले मनोविनोद के कई जीवंत प्रसंग बिहारी ने संयोजित किये हैं। ये प्रसंग निश्चय ही हमारे रागबोध का विस्तार करने वाले हैं। उदाहरण के लिए निम्निलिखित दोहा देख सकते हैं:

"नाँक चढ़ै सीबी करै जितै छबीली छैल।
फिरि फिरि भूलि वहै गहै प्यौं कंकरीली गैल।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 280)

नायक-नायिका कहीं साथ-साथ जा रहे हैं। रास्ते का एक भाग चिकना है और दूसरा कंकरीला। नायक, नायिका को चिकने रास्ते पर लिवा जाता है, जबकि स्वयं कंकरीले रास्ते पर चलता है। नायिका के मना करने के बावजूद वह बार- बार ऐसा करता है। उसके ऐसा करने से नायिका नाक चढ़ाकर सीबी करती है (एक प्रकार की आवाज) और नायक आनंदित होता है। इस तरह का मनोविनोद युवावस्था में प्रायः देखने को मिलता है।

बिहारी ने हालाँकि मुख्य रूप से संयोग-श्रृंगार पर स्वयं को केन्द्रित किया है, किन्तु इसका आशय यह नहीं है कि वियोग- श्रृंगार की ओर उन्होंने ध्यान ही नहीं दिया है। प्रिय- वियोग से उपजी नायिका की विरहानुभूति एवं उसकी

विभिन्न मानसिक स्थितियों का बिहारी ने कई स्थानों पर बड़ा मार्मिक वर्णन किया है। उदाहरण के लिए प्रोषितपतिका नायिका की मानसिक स्थिति का उद्घाटन करने वाला यह दोहा देखिये:

"कर लै, चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ भुज भेटि।
लहि पाती पिय की लखति, बाँचति, धरति समेटि।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 292)

प्रियतम का पत्र पाकर नायिका जिस प्रकार हर्षातिरेक से भर जाती है और जो- जो क्रियाएँ करती है, वह पूरी तरह स्वाभाविक है। परन्तु कहीं- कहीं बिहारी की नायिकाओं का विरह- ताप पूरी तरह अस्वाभाविक हो उठा है, इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता। निम्नलिखित उदाहरण देखिये:

"औंधाई सीसी, सु लखि बिरह- बरनि बिललात।
बिच हीं सूखि गुलाबु गौ, छीटौ छुई न गात।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ,103)

नायिका का विरह-ताप देख कर सखियों ने गुलाब जल की पूरी शीशी उस पर उड़ेल दी, परन्तु इसकी एक बूँद तक नायिका के शरीर तक नहीं पहुँच पाई। पूरा का पूरा गुलाब जल नायिका की विरह- ज्वाला से बीच में ही सूख गया। जाहिर है, पूरा वर्णन ऊहात्मक है।

ऐहिक जीवन के प्रति गहरा अनुराग रीतिकाव्य की प्रमुख विशेषता मानी जाती है। जीवन के प्रति यही अनुराग कहीं- न- कहीं इन कवियों को श्रृंगार- वर्णन के लिए भी प्रेरित करता है। डॉ. नगेन्द्र रीतिकाल की श्रृंगारिकता को 'गार्हस्थिक' मानते हैं। उन्होंने लिखा है: "इस श्रृंगारिकता के विषय में दूसरी बात यह ज्ञातव्य है कि इसका स्वरूप प्रायः ही गार्हस्थिक है" (रीतिकाव्य की भूमिका, पृष्ठ, 169)। गौरतलब है कि इस गार्हस्थिक श्रृंगार का दायरा बहुत सीमित है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो ' यहाँ की गार्हस्थिकता महज अन्तःपुर तक सीमित है। उसे बाहर की बैठक से जोड़ने वाले आँगन तक भी वह कम ही जाती है।' (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ, 67) जाहिर है बिहारी के श्रृंगार का स्वरूप भी कमोबेश यही है।

सच है कि बिहारी का जुड़ाव तत्कालीन सामंती परिवेश से था और इसका गहरा असर उनकी सौन्दर्य-चेतना पर भी दिखाई देता है। परन्तु इससे यह निष्कर्ष गलत होगा कि उनका साहित्य अपने समाज से पूरी तरह कटा है। बिहारी की नायिका महज शास्त्रीय ग्रंथों के आधार पर रची गयी है या ब्रज के समाज का भी उस पर कोई असर है? इस सवाल पर रामस्वरूप चतुर्वेदी का यह कथन देखने लायक है : "बिहारी की नायिका - शास्त्रीय ग्रंथों से बाहर - अपनी सज्जा, बोली- बानी और चेष्टाओं में ठेठ ब्रज की युवती है।" (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ, 76) बिहारी का अपने लोक से जुड़ाव था, इस बात का प्रमाण उनके काव्य में सहज रूप से मिल जाता है। नीति, श्रृंगार और भक्ति के अनेक दोहे उनके गहरे लोकज्ञान का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए बिहारी का यह दोहा देखिये :

"आवत जात न जानियतु, तेजहिं तजि सियरानु।
घरहँ जंवाई लौं घट्यौ खरौ पूस दिन- मानु।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 84)

लोक में यह प्रचलित है कि जो 'जमाई' (जमाता) ससुराल में रहता है, उसका तेज ठंडा पड़ जाता है अर्थात् सम्मान नहीं रहता। बिहारी के अनुसार पूस माह के दिन का भी वही हाल है, जो घरजमाई का। वह भी अपना तेज अर्थात उष्णता छोड़कर शीतल पड़ गया है।

रीतिकालीन कवियों के बारे में कहा जाता है कि उनका सामान्य जनता के दुःख-दर्द से कोई लेना-देना नहीं होता है। यह बात बहुत हद तह ठीक है, किन्तु इससे हटकर बिहारी ने कुछ ऐसे दोहे भी लिखे हैं, जो जनता की तत्कालीन पीड़ा की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं। तत्कालीन समाज की यथार्थ स्थिति की ओर संकेत करते हुए बिहारी कहते हैं:

"दुसह दुराजु प्रजानु कौं क्यौं न बढै दुःख- दंदु।
अधिक अँधेरी जग करत मिलि मावसु रबि-चंदु।।" (बिहारी- रत्नाकर, पृष्ठ, 167)

हालाँकि बिहारी ने ऐसे दोहे बहुत अधिक नहीं लिखे हैं, फिर भी इनसे यह संकेत तो मिलता है कि बिहारी ने सामान्य जनता की ओर देखना बिलकुल बंद नहीं कर दिया था। इस दृष्टि से स्वीकार करना होगा कि उनकी सौन्दर्य चेतना का स्वरूप अभिजात होने के साथ- साथ लोक से भी जुड़ा प्रतीत होता है।

6. निष्कर्ष

बिहारी रीतिकाल के एक श्रेष्ठ कवि हैं। वे रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं। बिहारी ने कोई लक्षण- ग्रन्थ नहीं लिखा है। हालाँकि उनके एकमात्र काव्य-संग्रह - 'सतसई' में काव्यशास्त्रीय नियमों का पूरी तरह ध्यान रखा गया है। बिहारी ने इस ग्रन्थ की रचना में रस, अलंकार, नायिकाभेद के तमाम शास्त्रीय ग्रंथों का सहारा लिया है। रीतिकाल सामंतवाद के सुदृढ़ होने का काल है। इस काल के साहित्य और कलाओं में शास्त्रीयता और अलंकरण पर विशेष बल है। इसका मुख्य कारण तत्कालीन सामन्ती परिवेश में निहित है। रीतिकाल के अधिकांश कवियों की भांति बिहारी भी राजदरबार से जुड़े थे। स्वाभाविक रूप से बिहारी की सौन्दर्य चेतना पर तत्कालीन सामन्ती परिवेश का गहरा प्रभाव है। बिहारी मूलतः एक श्रृंगारी कवि हैं। उसमें भी संयोग-श्रृंगार के प्रति यदि उनकी विशेष रुचि है तो इसका कारण तत्कालीन सामंती परिवेश से उनका जुड़ाव है। उन्होंने तमाम तरह की नायिकाओं का वर्णन किया है। उनकी नायिकाएँ विभिन्न प्रकार के साज-सज्जा, परिधान एवं हाव- भाव से युक्त हैं। इन नायिकाओं के सौन्दर्य वर्णन में कवि को बड़ी सफलता मिली है। सच है कि बिहारी के काव्य में लोक की अपेक्षित उपस्थिति नहीं है, पर इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने लोक की पूरी तरह से उपेक्षा की है। कुछ आलोचकों ने ठीक ही उनके नायक-नायिकाओं पर ब्रज के युवाओं की छाप देखी है। यही नहीं, लोक का बिहारी को गहरा ज्ञान है इसका प्रमाण उनके कई दोहों, विशेषकर नीति सम्बन्धी दोहों में ढूंढा जा सकता है। इस प्रकार उनकी सौन्दर्य चेतना पर लोक के प्रभाव से भी इनकार नहीं किया जा सकता।